संपादकीय

आतंकवाद: विश्लेषण के बिंदु

आतंकवाद अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर बेहद खतरनाक रूप से उभर चुका है। विगत एक दशक से इसकी तीव्रता और भयावहता से कई देशों के बाशिंदे निरंतर दहशत में जिंदगी और मौत की दहलीज पर खड़े जीवन व्यापन करने को बाध्य है। कब कौन इसका शिकार होगा कोई नहीं जानता। चारों तरफ काले नकाब लगाये और स्वचालित हथियारों से लैस जुनूनियों की एक ऐसी जमात जहां-तहां खड़ी हुई है जो केवल नरसंहार और मरने-मारने पर उतारू है। वैसे देखा जाये तो यह कोई नई परिघटना नहीं है। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद दुनिया के किसी न किसी कोने में इन आतंकी खतरों का निरंतर प्रभाव रहा है। इन आतंकी कार्यवाहियों से कितने घर जले और कितनी जिंदगियां इसकी भेंट चढ़ी इसका कोई हिसाब नहीं है। सिलसिला कहीं खत्म होता नजर नहीं आता—दुर्वेध्य गुफाओं और सुदृढ़ चट्टान-तोड़ मिसाइलों से भी नहीं। यह लोक-कथाओं का वह राक्षस पात्र है जिसका सिर काटते जाओ, नया सिर लग जाता है।

इस समूची परिघटना पर विचार कर देखे तो ज्ञात होगा कि वर्तमान में खतरनाक नख-दंत लिये आतंकवाद कोई अन्य लोक से नहीं आया है। यह हमारी राष्ट्रीयताओं की निरंतर बनती-बदलती नीतियों और उनके बाशिंदों में धर्म, जाति, नस्ल अथवा नृजातीय इतिहास से उपजे पूर्वाग्रहों की परिणति है। इसके उद्भव, विकास और निरंतर विशालकाय राक्षस के रूप में बढ़ते कद को सब देख और भोग रहे हैं। सारे गांव को मालूम है कि यह राक्षस रोज़ एक नौजवान् का भक्षण करता है। हृदय में टीस तब उठती है जब आपका नौजवान बेटा उसके पेट की क्षुधा मिटाने स्वयं समर्पण करने जाता है। तब आपको संपूर्ण ब्रह्मांड में अंधेरा ही अंधेरा लगता है। आपको उसकी तपन और जलन महसूस होती है। अभी हाल ही का उदाहरण लें। अमेरिका जैसी महाशक्ति को दुनिया में हो रही बर्बादी और आतंकी कार्यवाही से जन-धन हानि की कई अरसे तक परवाह नहीं रही। वे हमेशा इन हादसों के शिकार देशों के बाशिंदों को धैर्य और शांति का पाठ पढ़ाता रहा। बात इतनी ही होती तो कुछ सीमा तक समझ में आ सकती है लेकिन कई देशों की तरह अमेरिका ने भी अपने हित साधने के लिए कई आतंकी गुटों को धन-शस्त्रों की मदद के साथ-साथ पीठ पर हाथ रखकर प्रशिक्षित कर निरंतर परिपोषित

किया। उसे होश तब आया जब उसी के दिये हथियार, तकनीकी प्रशिक्षण और संसाधनों को उन्होंने खुद अमेरिका के विरुद्ध इस्तेमाल करना शुरू कर दिया। ये वही आतंकी गुट थे जो अमेरिका की मेहरबानी और षड्यंत्र पर पल-बढ़ रहे थे।

आतंकी गुटों ने अमेरिका पर जो वार किया वह इतना जबरदस्त था कि उसने समूचे तंत्र को हिलाकर रख दिया। इतना ही नहीं दुनिया के सबसे शक्तिशाली कहे जाने वाले दुर्वेध्य किले के खुफिया तंत्र के परखचे उड़ा दिये। इससे यदि छोटे-बड़े देश और उसके सामान्य बाशिंदे भयभीत हों तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इसके बाद हमला भारत की संसद पर हुआ। यह हमला उन्हीं गुटों के मरजीवड़ों ने किया जिन्होंने अमेरिकी शक्ति को ललकारा था। इसलिये यूरोप और अमेरिका ने इस घटना के प्रति सहानुभूति के साथ कुछ गंभीर सरोकार भी दर्शाये। भारत तो इस आतंकवाद को विगत दो दशकों से भुगत रहा है। देश के दो-दो प्रधानमंत्री इस वहशियत के शिकार हो गये--इंदिरा गांधी और बाद में राजीव गांधी। इन दोनों की हत्याओं में उन्हीं कुछ आतंकी गिरोहों का हाथ रहा जिन्हें कई राष्ट्र स्वहितों के परिपोषण के कारण शह देते रहे। आज एक अजीबो-गरीब स्थिति बन गई है। उन्हें अपनी ही कोख में जन्मी और पाल-पोसकर बड़ी की गई संतान को जड़ से मिटाने में जमीन-आसमान का जोर लगाना पड़ रहा है।

आतंकवाद राष्ट्रीय राज्यों के आंतरिक व्यवस्थाओं और उनके अस्तित्व के सामने चुनौती के रूप में उभरा है। भारत की जनतंत्रीय व्यवस्था और देश की एकता-अखंडता को जितना वर्तमान में खतरा है उतना शायद स्वतंत्रता के पश्चात कभी नहीं रहा। पंजाब में आतंकी तत्वों के सफाये के उपरांत कश्मीर और उत्तर-पूर्वी भागों में जो विघटनकारी शक्तियां सक्रिय है उसके कारण व्यवस्था संचालन में बड़ा भारी विघ्न पड़ रहा है। कुछ सीमा तक ये उपराष्ट्रवादी भावनाओं का उभार है लेकिन मूल प्रश्न समस्या के समाधान में साधनों का है। ए.के. 47, मोर्टार या मिसाइलों के ज़ोर से समाधान आंतरिक विरोधाभासों के कारण स्थायी नहीं हो सकता। यह जनतंत्रीय-व्यवस्था के मूल सिद्धांत को नकारता है। लोकतंत्रीय व्यवस्था में मेज के दोनों ओर बैठकर बातचीत से निपटारा होता है, बंदूकों से नहीं। देश में ऐसे कई गुट है जो अपनी हठधर्मिता और संकीर्ण हितों की परिपूर्ति के लिये देश के व्यापक हितों की बलि चढ़ाने पर आमादा है। भारत में इन समूहों की कार्य शैली और लक्ष्य किसी भी तरह सहिष्णुता और समन्वय पर आधारित बहुलवादी परंपरा से मेल नहीं खाते बल्कि वे सदियों पुरानी बहुलवादी जीवन शैली पर निरंतर कुठाराघात कर रहे हैं। इस देश में भी ठीक तालिबान की तर्ज पर संकीर्ण धर्मांधता अपने पांव पसार रही है और मंदिर-मस्जिद के मुद्दों के नाम पर आम नागरिक के जीवन को तहस-नहस किये डाल रही है।

आतंक के कई रूप होते है। वह कई मुखौटों मे प्रकट होता है और धीरे-धीरे घृणा की फौज में परिवर्तित हो जाता है। हम किसी काले नकाब और बंदूक वाले को देखकर भयभीत होते है और यह समझते है कि बस आतंक का यही रूप है। लेकिन यह सच नही है। नब्बे के दशक मे बंबई के मंदिरों में घंटियों के साथ जब *जय जगदीश हरे* की आरती गाई जाती थी तो अल्पसंख्यक समुदाय की औरतें अपने बच्चों को छाती से चिपटा लेती थी। उन घंटियों में बंदूकों के धमाके की आवाज गूंजती थी। उसका क्या परिणाम हुआ उससे हम सब परिचित है। उस घिनौने अध्याय को दोहराने की आवश्यकता नही। आज वे ही सांप्रदायिक शक्तियां और उनके कठमुल्ले पुनः आतंक की उसी भाषा मे बोल रहे है। ठीक उसी प्रकार जैसे कुछ महीने पूर्व अफ़गानिस्तान के तालिबान बोल रहे थे। गहराई से विचार कर देंखे तो इन सबके चेहरे एक से है। आप उनका नकाब-उतारकर देखिये। बाहर से गुपचुप आकर निर्दोषों का खून करने वालो और देश के अंदर *जो हिंदू की बात करेगा वही देश मे राज करेगा* का वातावरण बनाने वालों मे कहीं कोई फर्क नही है।

वेददान सुधीर